मातृभाषा

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जहाँ देश में भाषा, एक व्यापक चर्चा का विषय बना है, वही दूसरी तरफ देश में मातृभाषा का महत्व कम होता दिखाई दे रहा है। विश्व में विगत 40 वर्षों में लगभग 150 अध्ययनों के निष्कर्ष हैं कि मातृभाषा में ही शिक्षा होनी चाहिए, क्योंकि बालक को माता के गर्भ से ही मातृभाषा के संस्कार प्राप्त होते हैं। भारतीय वैज्ञानिक सी.वी. श्रीनाथ शास्त्री के अनुभव के अनुसार अंग्रेजी माध्यम से इंजीनियरिंग की शिक्षा प्राप्त करने वाले की तुलना में भारतीय भाषाओं के माध्यम से पढ़े छात्र, अधिक वैज्ञानिक अनुसंधान करते हैं। राष्ट्रीय मस्तिष्क अनुसंधान केन्द्र, गुडगांव की डॉ0 नन्दिनी सिंह के अध्ययन (अनुसंधान) के अनुसार, अंग्रेजी की पढ़ाई से मस्तिष्क का एक ही हिस्सा सक्रिय होता है, जबकि हिन्दी की पढ़ाई से मस्तिष्क के दोनों भाग सक्रिय होते हैं। सर आइजेक पिटमैन ने कहा है किं ससार में यदि कोई सर्वाङ्ग पूर्ण लिपि है तो वह देवनागरी है। विदेशी भाषा के माध्यम से पढ़ाई, अनुसंधान, पुस्तकें आदि आधुनिकता के भी विरूद्ध है, क्योंकि आधुनिक-ज्ञान, समाज के सभी वर्गो तक अपनी भाषा में ही पहुंचाया जा सकता है।

लेकिन दूसरी तरफ आज दुनिया के लगभग 170 देशों में किसी न किसी रूप में हिन्दी पढ़ायी जाती है। विश्व के 32 से अधिक देशों के विश्वविद्यालयों में संस्कृत पढ़ाई जा रही है। इंग्लैण्ड के सेंट जेम्स विद्यालय में 6 वर्ष तक संस्कृत पढ़ना अनिवार्य है। पहले भारत में भी जहां कहीं हिन्दी का विरोध (राजनैतिक आदि कारणों से) था या जहां हिन्दी का प्रयोग कम माना जाता था जैसा कि तमिलनाडु, मिजोरम, नागलैण्ड आदि अब इन राज्यों में भी हिन्दी बोलने सिखाने हेतु हिन्दी स्पीकिंग क्लासेस बड़ी मात्रा में प्रारंभ हुई हैं। अरूणाचल राज्य की जनव्यवहार की भाषा हिन्दी है तथा नागालैण्ड राज्य ने द्वितीय राजभाषा के रूप में हिन्दी को मान्यता दी है। दक्षिण हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा आदि की हिंदी परीक्षाओं में भारी संख्या में लोग शामिल हो रहे है। वास्तव में भारतीय भाषाओं को अंग्रेजी से चुनौती नहीं है, बल्कि अंग्रेजी मानसिकता वाले भारतीयों से है। हमें हिन्दी की या भारत की किसी भाषा की वकालत नहीं करनी है, लेकिन राष्ट्रहित की दृष्टि से जो वैज्ञानिक एवं तर्कसम्मत है, उसकी वकालत अवश्य करनी है।

मातृभाषा सीखने, समझने एवं ज्ञान की प्राप्ति में सरल है। पूर्व राष्ट्रपति डॉ0 अब्दुल कलाम ने स्वंय के अनुभव के आधार पर कहा है कि"मैं अच्छा वैज्ञानिक इसलिए बना, क्योंकि मैंने गणित और विज्ञान की शिक्षा मातृभाषा में प्राप्त की (धरमपेठ कॉलेज, नागपुर)।"अंग्रेजी भाषा माध्यम में पढ़ाई में अतिरिक्त श्रम करना पड़ता है। मेडिकल या इंजीनियरिंग पढ़ने हेतु पहले अंग्रेजी सीखनी पड़ती है बाद में उन विषयों का ज्ञान प्राप्त होता है। पंडित मदन मोहन मालवीय अंग्रेजी के ज्ञाता थे। उनकी अंग्रेजी सुनने अंग्रेज विद्वान भी आते थे। लेकिन उन्होंने कहा था कि "मैं 60 वर्ष से अंग्रेजी का प्रयोग करता आ रहा हूँ, परन्तु बोलने में हिन्दी जितनी सहजता अंग्रेजी में नहीं आ पाती। इसी प्रकार विश्व कवि रविन्द्र नाथ ठाकुर ने कहा है:-

" यदि विज्ञान को जन-सुलभ बनाना है तो मातृभाषा के माध्यम से विज्ञान कीशिक्षा दी जानी चाहिए।"

महात्मा गांधी का कथन- "विदेशी माध्यम ने बच्चों की तंत्रिकाओं पर भार डाला है, उन्हें रट्टू बनाया है, वह सृजन के लायक नहीं रहे..... विदेशी भाषा ने देशी भाषाओं के विकास को बाधित किया है।"

आज हमारे देश के कुछ तथाकथित विद्वानों द्वारा यह भी तर्क दिया जाता है, कि बिना अंग्रेजी के व्यक्ति या देश का विकास संभव नहीं है। लेकिन दुनिया के किसी भी महापुरूष ने यह बात नहीं कही है। अमरीका के बिल क्लिंटन से बराक ओबामा तक के राष्ट्रप्रमुखों ने अपने छात्रों को सम्बोधित करते हुए यह अवश्य कहा, कि गणित और विज्ञान की पढ़ाई अच्छी करिये अन्यथा भारत और चीन के छात्र आपको पीछे छोड़ देंगे। उन्होंने अंग्रेजी के बारे में नहीं कहा। विश्व के आर्थिक एवं बौद्धिक दृष्टि से सम्पन्न जैसे अमरीका, रशिया, चीन, जापान, कोरिया, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, स्पेन, इजरायल आदि देशों में जन समाज, शिक्षा एवं शासन-प्रशासन की भाषा वहां की अपनी भाषा है। इजरायल के 16 विद्वानों ने नोबल पुरस्कार प्राप्त किए है। सभी ने अपनी मातृभाषा

हिब्रु में ही कार्य किया है। इसी प्रकार माइक्रो साफ्ट के सेवानिवृत वरिष्ठ वैज्ञानिक संक्रात सानू ने अपनी पुस्तक में दिये गये तथ्यों के आधार पर यह कहा है कि विश्व में सकल घरेलू उत्पाद में प्रथम पंक्ति के 20 देश सारा कार्य वे अपनी भाषा में ही कर रहे हैं, जिनमें चार देश, अंग्रेजी भाषी हैं, क्योंकि उनकी मातृभाषा अंग्रेजी है। वह आगे लिखते हैं कि विश्व के सकल घरेलू उत्पाद में सबसे पिछड़े हुए 20 देशों में विदेशी भाषा में या अपनी और विदेशी दोनों भाषा में उच्च शिक्षा दी जा रही हैं तथा शासन-प्रशासन का कार्य भी इसी प्रकार किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब तक भारत में शिक्षा, प्रतियोगी परीक्षाएं एवं न्यायालयों सहित शासन-प्रशासन का कार्य अपनी भाषा में नहीं होगा, तब तक देश आगे नहीं बढ़ सकता।

नीपा के पूर्व निदेशक श्री प्रदीप जोशी के अनुभव के अनुसार विश्व के ख्याति प्राप्त अणु वैज्ञानिक एवं जापान के हिरोशिमा विश्वविद्यालय के कुलपतिं अंग्रेजी नहीं जानते। अपने देश में यह भी तर्क दिया जाता है कि वर्तमान वैश्वीकरण के युग में विदेश जाने हेतु अंग्रेजी का ज्ञान आवश्यक है। भारत से हर वर्ष लगभग दो लाख लोग विदेश जाते हैं। उसमें भी सभी अंग्रेजी भाषा वाले देशों में नही जाते। इतने लोगों के लिए करोड़ो छात्रों पर अनिवार्य रूप से अंग्रेजी थोपना, यह अन्याय एवं अत्याचार नहीं तो और क्या हैं? वैसे भी किसी भी भाषा को सीखना कोई कठिन कार्य नहीं है। किसी भी भाषा को 3 से 6 महीने में सीखा जा सकता है। दूसरी और मात्र अंग्रेजी के ज्ञान के कारण विश्व की अन्य भाषाओं के साहित्य में उपलब्ध ज्ञान का लाभ अपने देश को प्राप्त नहीं हो पा रहा है। रशियन, जर्मन भाषा में विज्ञान की पुस्तकें अधिक मात्रा में उपलब्ध हैं। इसी प्रकार अच्छे दार्शनिक जर्मन में हुए हैं एवं काव्य- साहित्य तथा पुरातत्व का अधिक साहित्य फ्रांस में प्राप्त है।

यह भी तर्क दिया जाता है कि उच्च शिक्षा एवं विशेषकर विज्ञान और तकनीकी विषयों की पुस्तकें, अपनी भाषा में उपलब्ध नहीं हैं। किसी भी भाषा की पुस्तकों का अनुवाद करना कोई कठिन कार्य नहीं है, परंतु हमारी मानसिकता भी इसी प्रकार की बनी है किं अग्रेजी का साहित्य ही श्रेष्ठ है और उसकी नकल करके कार्य चलाया जा रहा है। इस कारण से मौलिक चिंतन के आधार पर अपने देश की आवश्यकतानुसार पुस्तकें, अनुसंधान आदि अकादमिक कार्य बहुत ही कम हो रहा है। हमारी अच्छाइयों और विशेषताओं का महत्व भी हमको ध्यान में नही आता। जैसे प्रयाग (इलाहाबाद) का सफल कुभंमेला या मुम्बई का डिब्बा प्रबंधन, ये भी एक श्रेष्ठ प्रबंधन के नमूने हैं। यह बात जब विदेश से लोग इस पर अध्ययन-अनुसंधान करने आए तब हमारे भारतीय प्रबंधन संस्थान के विद्वानों को इसका महत्व ध्यान में आया।

भारत के ख्याति प्राप्त अधिकतर वैज्ञानिकों ने अपनी शिक्षा मातृभाषा में ही प्राप्त की है। जिसमें प्रमुख रूप से जगदीश चन्द्र बसु, श्रीनिवास रामानुजन, डॉ अब्दुल कलाम आदि। इसी प्रकार वर्तमान में विभिन्न राज्यों की बोर्ड की परीक्षाओं में उच्च अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थी, मातृभाषा में पढ़ने वाले ही अधिक हैं। शिक्षा के विभिन्न आयोगों एंव देश के महापुरूषों ने भी मातृभाषा में शिक्षा होनी चाहिए, ऐसे सुझाव दिये है। महात्मा गांधी ने ठीक ही कहा हैः-

'' बच्चों के मानसिक विकास के लिये मातृभाषा उतनी ही आवश्यक है
जिनता शारीरिक विकास के लिये मां का दूध''

पिछले 175 वर्षों की अंग्रेजी शिक्षा से देश को काफी नुकसान हुआ है और हो रहा है। बालकों के मस्तिष्क पर अंग्रेजी के कारण बोझ बढ़ा है। यह एक प्रकार से उन पर अत्याचार है। इस कारण से उनका विकास ठीक ढंग से नहीं हो पा रहा है। वे न तो ठीक से अंग्रेजी सीख पाते हैं और न ही मातृभाषा। इसी प्रकार समय, परिश्रम और धन का भी अपव्यय हो रहा है। शिक्षा, सार्वत्रिक एवं सर्वस्पशीय नहीं हो पा रही है। हमारे यहां अंग्रेजी और गणित में सबसे अधिक बच्चे विफल होते हैं। विदेशी भाषा में जानकारी या कुछ मात्रा में ज्ञान प्राप्त हो सकता है। लेकिन ज्ञान-सृजन नहीं हो सकता। इसी प्रकार शोधकार्य में भी वैश्विक स्तर पर हम पिछड़ रहे हैं। अपने देश में शोधकार्य और साहित्य सृजन अधिकतर अंग्रेजी में होने से अपने देश के लोगों के बदले विदेश के लोग उनका ज्यादा लाभ उठा रहे हैं। हमारे देश के विद्वान विदेशों पर र्निभर हो रहें हैं।

आज देश में अंग्रेजी, उच्च वर्ग की भाषा है और भारतीय भाषाएँ सामान्य लोगों की हैं, जिसके कारण देश में दो वर्ग खड़े हो गए हैं। विदेशी भाषाओं में मात्र अंग्रेजी के ज्ञान के कारण हम सारी दुनिया को अंग्रेजी चश्में से ही समझने का प्रयास करते हैं। वास्तव में दुनिया को ठीक से समझने एवं अच्छे सम्बन्ध स्थापित करने हेतु कम से कम आठ भाषाओं का ज्ञान आवश्यक है। जैसे - रशियन, चाइनीज, जापानी, स्पेनिस, जर्मन, अंग्रेजी, अरबी, फ्रांसीसी है। अंग्रेजी का अधिक प्रभुत्व (प्रचलन) उन्ही देशों में ज्यादा है जो कभी अंग्रेजो की सरकार के अधीन (गुलाम) थे। अन्य देश अपनी-2 भाषा को महत्व दे रहे हैं। एक हम है किं अग्रेजी की गुलामी ढ़ोते चले आ रहे हैं।

यह कहना उचित ही लगता है किं अग्रेजी शोषण की भाषा बन गई है। चिकित्सा, इंजीनियरी न्याय एवं शासन-प्रशासन के स्तर पर सर्वत्र अंग्रेजी के प्रयोग के कारण भारत के लगभग 95 प्रतिशत लोग उसे समझ नहीं पाते। अंग्रेजी पुस्तकों का देश में 2000 करोड़ रूपये से अधिक का व्यवसाय है।

फ्रांसीसी, जापानी, जर्मनी बोलने वाले 2 प्रतिशत से कम लोग होने के बावजूद उनकी दुनिया में प्रतिष्ठा है, जबकि हिन्दी बोलने वाले लगभग 70 करोड से अधिक होने के बाद भी हम दुनिया में अपमानित हैं। उदाहरण-विगत दिनों में अमरीका एवं आस्ट्रेलिया में भारतीय छात्रों की प्रताड़ना की अनेक घटनाएँ सामने आई हैं।

भाषा संस्कृति और संस्कारों की संवाहिका होती है। भाषा के पतन से संस्कृति व संस्कारों का भी पतन हो रहा है,। भाषा बदलने से मूल्य भी बदल जाते हैं। भाषा संस्कृति का अधिष्ठान है। वर्तमान में भारत में जिस प्रकार अंग्रेजी का स्थान है, उसी प्रकार सन् 1362 तक ब्रिटेन में फ्रांसीसी का स्थान था। फिनलेन्ड में 100 वर्ष पूर्व स्वीडिश भाषा चलती थी, रशिया में जार के जमाने में फ्रांसीसी भाषा का दबदबा था। इन सभी देशों में वहां की जनता एवं शासकों की इच्छा शक्ति के कारण, आज वहां अपनी भाषाओं में सारा कार्य हो रहा है, आवश्यकता है अपने देश की जनता में इस प्रकार की इच्छाशक्ति जागृत करने की। इसकी शुरूआत स्वयं से करनी पड़ेगी। इस हेतु सभी स्थानों पर अपने हस्ताक्षर अपनी भाषा में करें। किसी भी भाषा में लिखें या बोलें तब 'भारत' - शब्द का प्रयोग करें, इन्डिया का नहीं। कार्य व व्यवहार में अपनी भाषा का ही उपयोग करें। अपने बालकों को मातृभाषा में ही पढ़ायें। अपने संगठन, संस्था के स्तर पर सारा कार्य व्यवहार अपनी ही भाषा में करें। अपने बालकों को मातृभाषा माध्यम के विद्यालय में ही पढ़ायें। घर, कार्यालय, दुकान में नाम पट्ट एवं पट्टिकाएं अपनी भाषा में ही लिंखे। अपने व्यक्तिगत पत्र, आवेदन पत्र, निंमत्रण-पत्र आदि भी मातृभाषा या भारतीय भाषा में लिखें या छपवायें।

यह एक लम्बी लड़ाई है। इस हेतु समग्रता से प्रयास करना होगा। प्रथम देशव्यापी जन-जागरण हेतु गोष्ठी, परिचर्चा, कार्यशाला, परिंसवादों के आयोजन के माध्यम से समाज में अंग्रेजी के बारे में जो भ्रम फैलाया गया है, उसको दूर करके अपनी भाषाओं की वैज्ञानिकता एवं तार्किकता को पुनः स्थापित करना होगा। दूसरा भारतीय भाषाओं में अनुवाद एवं साहित्य सृजन तथा अनुसंधान हेतु शोध केन्द्रों की स्थापना करनी होगी। जहां भी सरकार के स्तर पर भाषा के कानून का उल्लंधन किया जा रहा है या भारतीय भाषाओं को अपमानित किया जा रहा है, उसको रोकने के प्रयास करने होगें और कानूनी लड़ाई भी लड़नी होगी। देश की संसद में भाषा के प्रश्न पर व्यापक चर्चा हो, इस हेतु भारतीय भाषाओं के प्रति निष्ठा, प्रेम रखने वाले राजनैतिक पक्षों या सांसदो को एक मंच पर लाकर प्रयास करना होगा। हिन्दी और भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने के साथ-साथ, उसे रोजगार से भी जोड़ना होगा। उच्चतम न्यायालय में हिन्दी एवं उच्च न्यायालयों में राज्य की राजभाषा एवं संघ की राजभाषा हिन्दी में कार्य हो, इस हेतु भाषा प्रेमी वकीलों का भी एक मंच बने। सभी भर्ती (प्रतियोगी) परीक्षाओं में अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त करके उसके साथ-2 हिंदी और भारतीय भाषाओं को स्थान मिले, इस हेतु देश के छात्र संगठनों एवं छात्रों का भी एक मोर्चा बने। इन सारे कार्यों को क्रियान्वित करने हेतु भाषा प्रेमी सभी नागरिकों एवं सामाजिक, राजनैतिक नेतृत्व एवं संस्था, संगठनों को एक मंच पर लाकर इस संघर्ष को आगे बढ़ाना होगा तथा निरन्तर संघर्ष करना होगा। वह ध्रुव सत्य है कि विजयश्री भारतीय भाषाओं को मिलेगी।

❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖

✍श्री अतुल कोठारी
(सचिव, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास)
सरस्वती बाल मन्दिर, जी ब्लॉक नारायणा विहार
नई दिल्ली-110028, सम्पर्क सूत्र:-9868100445
ईमेल:- **atulssun@gmail.com**
दिंनाकः-25.5.2016

विधि शिक्षा और न्याय के क्षेत्र में भारतीय भाषा

14 सितम्बर 1949 को हिन्दी को भारतीय संघ की राजभाषा बनाया गया। यह सौभाग्य का विशय है कि देश की जनभाषा हिन्दी को प्रथम बार देश की राजभाषा के रूप में संवैधानिक मान्यता दी गई। स्वतंत्रता के बाद देश में राज्यों का जो गठन किया गया वह भी भाषा के आधार पर हुआ। 14 प्रमुख भाषाओं को संविधान की 8वीं अनुसूची में स्थान दिया गया जो आज बढ़कर 22 हो गई हैं।

परन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि देश की राजभाषा हिन्दी को देश के उच्चतम न्यायालय में मान्यता नहीं है। उसी प्रकार केवल 4 राज्यों को छोड़कर, अन्य किसी भी राज्य की राजभाषा को वहां-2 के उच्च न्यायालय में मान्यता नहीं है। यह वास्तविक लोकतंत्र है क्या? यह प्रश्न उठता है। उन राज्यों की जनभाषा जो राजभाषा भी है, को वहां के उच्च न्यायालय में मान्यता न देना, उनके साथ घोर पक्षपात है। इसका कारण यह है कि वश 1963 में पारित राजभाषा अधिनियम में सरकारी कार्यो/ प्रयोजनों के लिए 26 जनवरी 1965 के बाद भी अंग्रेजी के प्रयोग पहले की तरह किए जाते रहने की छूट दी गई। इसलिए अनुच्छेद-348 के तहत उच्चतम एवं उच्च न्यायालयों के कामकाज की भाषा पहले की तरह अंग्रेजी ही है। इस के द्वितीय परन्तुक में यह व्यवस्था भी की गई है कि राज्य के राज्यपाल महोदय, मा. राष्ट्रपति की सहमति से अपने राज्य के उच्च न्यायालय में अंग्रेजी के साथ हिन्दी या उस राज्य की राजभाषा को वहां की सभी प्रकार की कार्यवाही में प्रयोग किये जाने की अनुमति दे सकते हैं। इसी व्यवस्था के अंतर्गत राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश एवं बिहार के उच्च न्यायालयों में हिन्दी में न्यायिक कार्यवाही की जा रही है। इन्हीं राज्यों से अलग हुए झारखंड, उत्तराखंड एवं छत्तीसगढ़ में

इस प्रकार की अनमुति स्वभाविक रूप से होनी चाहिए थी, जोकि नहीं है। राज्य पुनर्गठन कानून के अनुसार, जब एक राज्य में से दो राज्य बनते हैं, तब दोनों में वहां की पुरानी व्यवस्था यथावत रहती है। लेकिन इस विषय में ऐसा न होने का कारण वहां-2 के शासकों, प्रशासकों ने उनके स्वाभाविक अधिकार के लिए जागरूकता नहीं दिखाई है। अतः इन नये तीन राज्यों के उच्च न्यायालयों में वहां की राजभाषा को मान्यता नहीं है।

जिस प्रकार उपरोक्त चार राज्यों के उच्च न्यायालयों में वहां की राजभाषा हिन्दी को वहां के उच्च न्यायालयों में मान्यता दी गई है, उसी प्रकार तमिलनाडु, गुजरात, छत्तीसगढ़ ने भी अपनी राज्य की राजभाषा के प्रयोग की छूट हेतु मांग की तो केन्द्र सरकार ने उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की राय मांगी और बाद में इन तीनों राज्यों को उत्तर दिया गया कि उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश, इससे सहमत नहीं है। संविधान के अनुसार तो राज्यपाल महोदय मा. राष्ट्रपति की अनुमति से इसको लागू कर सकते है। फिर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश से क्यों पूछा गया? और उसका बहाना बनाकर केन्द्र सरकार ने इन तीनों राज्यों को अनुमति न देकर उन तीनों राज्यों के साथ भेदभाव किया है। एक प्रकार से केन्द्र सरकार ने संविधान के प्रावधान का उल्लंधन किया है।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि न्यायालय, न्याय व्यवस्था देश के आम नागरिकों को न्यायपूर्ण तरीके से जीने का अधिकार मिले और कहीं किसी के साथ अन्याय होता है, तो उसे न्याय मिले, इस हेतु यह व्यवस्था है। परन्तु हमारे उच्चतम तथा उच्च न्यायालयों में जिस भाषा में कार्य होता हैं, उसे देश की 97 प्रतिशत जनता नहीं समझ पाती। न्यायालयों में न्यायामूर्ति और अधिवक्ता के बीच क्या बहस हुई, वे97 प्रतिशत लोग समझ ही नहीं पाते। जिस भाषा में उनको र्निणय लिखित में दिया जाता है, उसे वह समझ ही नहीं पाते। क्या? देश के तीन प्रतिषत अंग्रेजी जानने वाले लोगों के लिए ही न्याय व्यवस्था है। राज्यों के उच्च न्यायालयों में वहां की भाषा में कार्य हो उसके विरूद्ध यह तर्क दिया जाता है कि न्यायमूर्तियों का स्थानान्तरण होने के कारण उनको अन्य राज्यों की भाषा समझने में कठिनाई होगी। परन्तु वर्तमान में अधिकतर उच्च न्यायालयों में 10 प्रतिशत भी अन्य भाषा के न्यायाधीष नहीं हैं। सामान्यतः उच्च न्यायालयों में अधिक से अधिक दो-तीन न्यायाधीश अन्य राज्यों के होते हैं। जब वहां की स्थानीय भाषा में बहस होगी, तब उसी राज्य के न्यायधीशों की बेंच हो सकती है। दूसरा जिस प्रकार आज संसद में व्यवस्था है कि कोई भी सदस्य चाहे जिस भाषा में बोले उसे दूसरा सदस्य, अपनी भाषा में सुन सकता हैं। ऐसा अनुवाद की व्यवस्था से होता है। देश के 24 उच्च न्यायालयों में भी इसी प्रकार की अनुवाद की व्यवस्था की जा सकती है। प्रषासनिक सेवा के अधिकारियों (आई.ए. एस., आई.पी.एस.) को भी जिस राज्य में उनकी नियुक्ति होती है, वहां की भाषा का प्रशिक्षण दिया जाता है। न्यायधीशों के लिए भी इस प्रकार की व्यवस्था की जानी चाहिए।

उच्चतम एवं उच्च न्यायालयों में शासकों-प्रशासकों के अनुसार माना कि वहां कुछ कठिनाई है। परन्तु सत्र, अधीनस्थ, जिला न्यायालयों में तो अपराधिक प्रक्रिया संहिता-272, सिविल प्रक्रिया संहित-137 के अनुसार, वहां-2 की राजभाषा में कार्य करने का प्रावधान है और अन्य राज्यों के न्यायाधीशों का प्रश्न भी नहीं है। फिर भी अनेक राज्यों में अंशतःया कुछ न्यायालयों में पूर्णरूप से अंग्रेजी में कार्य किया जा रहा है। अनेक न्यायालयों में वहां-वहां की राजभाषा के अनुसार कम्प्यूटर और स्टेनो, टाईपिस्ट नहीं हैं। इस कारण से बहस

और सुनवाई वहां की भाषा में होने के उपरान्त भी र्निणय अंग्रेजी में दिये जाते हैं। अनेक न्यायालयों में बहस भी अंग्रेजी में की जाती है। ध्यान में यह आता है, कि कुछ कठिनाईयों का बहाना बनाकर वास्तव में शासन-प्रषासन के द्वारा जनता को अपने अधिकारों से वंचित रखने के शडयंत्र के तहत, भारतीय भाषाओं में कार्य करने में बनावटी रूकावटें र्निमाण की जा रही हैं।

अनेक राज्यों में वहां-2 के कानून भी प्रथम अंग्रेजी में बनाए जाते हैं। बाद में कुछ का राज्य की राजभाषा में भाशांतरण किया जाता है, कुछ का नहीं भी किया जाता हैं। वास्तव में शासन-प्रषासन में बैठे हुए अधिकतर लोग, भारतीय भाषाओं को स्थापित नहीं होने देना चाहते। यह अनुभव सिद्ध बात है। शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास के द्वारा पिछले दो वर्श में केन्द्र, विभिन्न राज्यों एवं उनके संस्थानों को उनके राजभाषा के कानून के विरूद्ध कार्य करने के संदर्भ में दो हजार से भी अधिक पत्र लिखे गए हैं, जिनमें से कुछ का सकारात्मक परिणाम आया है। कुछ राज्य सरकारें/कार्यालय तो उत्तर देने को भी आवश्यक नहीं समझते।

इसी प्रकार अनेक राज्यों में क्रमशः विधि की शिक्षा का माध्यम भी अंग्रेजी है या अंग्रेजी माध्यम किया जा रहा है। सरकार के द्वारा राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई है, उनका माध्यम भी केवल अंग्रेजी है। विधि-सेवा से सम्बन्धित प्रतियोगी परीक्षाओं की भी इसी प्रकार की स्थिति देखने को मिलती है।

जब तक शासन-प्रषासन, उच्च शिक्षा एवं प्रतियोगी परीक्षाओं में अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त नहीं की जाएगी तब तक भारतीय भाषाओं को स्थापित करना असंभव है। इस हेतु देशभर में भारतीय भाषाओं के प्रतिष्ठान हेतु एक बड़ा आन्दोलन, अभियान चलाने की आवश्यकता है। इसका प्रारंभ शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास ने कर भी दिया है। आवश्यकता है, देश की हजारों संस्थाएँ एवं विद्वान, स्वभाषा प्रेमी इस हेतु एक मंच पर साथ आकर आवाज उठायें, तो इस आन्दोलन का देशव्यापी स्वरूप बनेगा। तब शासन-प्रषासन का दिमाग भी ठीक होगा और भारतीय भाषाओं में शासन-प्रषासन का कार्य एवं सभी स्तर की शिक्षा, न्यायालयों और प्रतियोगी परीक्षाओं का माध्यम भी अपनी भाषाएं होंगी। आओ, इस विश्वास के साथ, भारतीय भाषाओं को न्याय दिलाने हेतु, एक राष्ट्रव्यापी आन्दोलन खड़ा करने के लिए हम संकल्पबद्ध हों। यही मेरी प्रार्थना है।

✍श्री अतुल कोठारी
(सचिव, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास)
सरस्वती बाल मन्दिर, जी ब्लॉक नारायणा विहार
नई दिल्ली-110028, सम्पर्क सूत्र:-9868100445
ईमेल:- **atulssun@gmail.com**